ज्यौतिषशास्त्रके एक सफल साधक—

श्री मुकुन्द दैवज्ञ पर्वतीय

[लेखक—श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यास ज्योतिषाचार्य सम्पादक 'विक्रम']

[श्रद्धेय व्यासजी यहां जिन दैवज्ञकुलमूर्द्धन्य विद्वान्‌का परिचय दे रहे हैं—उनसे यद्यपि हमारा साक्षात्कार नहीं हुआ, तथापि हमने उनके कुछ मुद्रित ग्रन्थ अवश्य देखे हैं और कई सज्जनोंसे प्रशंसा भी सुनी है। खेद है कि उक्त पंडितजीकी अथाह ग्रन्थ सम्पत्ति अभी अमुद्रित ही पड़ी है और हममेंसे अधिकांश व्यक्ति अभी इस महान् वैज्ञानिक एकान्त साधककी साधनासे भी अपरिचित ही हैं। देशके शिक्षा-प्रेमी शासकों एवं धनी मानी सज्जनों का कर्तव्य है कि वे पण्डितजीके ग्रन्थोंको प्रकाशित करवाकर अपने कर्तव्यका पालन करें। जहां इस महान् तपस्वी ने अपना अमूल्य जीवन लगाकर निष्कामभावसे एकान्त-साधना द्वारा भारतीय ज्योतिर्विज्ञानको २५ तीस सहस्र श्लोकात्मक नवीन साहित्य प्रदान किया है, वहां हमारा क्या इतना भी कर्तव्य नहीं है कि उस साहित्यको प्रकाशित कराके हम अपने विज्ञानका गौरव बढ़ा सकें ? साथ ही हम देवप्रयागके सुप्रसिद्ध सहृदय विद्वान् और उक्त पण्डितजी के प्रधान शिष्य श्री पं० चक्रधरजो जोशीसे भी निवेदन करेंगे कि वे अपने गुरुदेवकी ग्रन्थराशिको प्रकाशित कराने की शीघ्र ही सुव्यवस्था करें। वे एक बार इस ओर कटिबद्ध हो जावें तो हमें आशा है कि इस विषयमें अन्यान्य सहृदय सज्जनोंका सहयोग भी उन्हें अवश्य प्राप्त होगा। —सम्पादक]

श्री मुकुन्द दैवज्ञ महोदय



देवप्रयाग (बदरिकाश्रम)

निः स्वार्थ साहित्य सेवामें अपने जीवनका विपुल-भाग समर्पित कर देनेवाले व्यक्ति-विशेष विरल ही होते हैं, उनका जन्म विशेष-हेतुकी परिपूर्तिके लिए ही होता है। ज्योतिःशास्त्र एक ऐसा विज्ञान है; जिसकी फल-निष्पत्तिके लाभवश तो अनेक इसमें प्रवृत्ति रखते हैं, परंतु केवल खगोल और गणितके शास्त्रीय ज्ञानमें अवगाहन कर आनन्द-निमग्न बनने वाले वे ही विद्या-रसिक होते हैं, जिन्हें दुर्गम विज्ञानोदधिके तल-स्पर्श कर रत्नराशि—समुच्चयका दर्शन करना अभीष्ट होता है। समस्त सौर-मण्डलकी सैर करनेकी भावना रखने वाले विद्वान् 'करतल-कलितामलकवत्' गोलको तौल कर वैसा ही सुखानुभव करते हैं; जैसा पुरातन जन (धार्मिक) चारों धामकी यात्रा करके अपनेको कृत-कृत्य समझता है। अथवा आधुनिक जन विश्वपर्यटनका अपनेमें आत्म-विमुग्धताका अनुभव करता है। विभिन्न—साहित्य पर विभिन्न—कालमें विविध प्रवृत्तियोंने परिणाम किये हैं। और नवीनतम रचनाएं हुई हैं। परन्तु वैज्ञानिक—साहित्य पर 'रुक्षता' का आरोप किया जाता है। वह सर्वगम्य या साधारण गम्य नहीं, अतएव केवल तत्त्व-चिन्तनकी भावना रखने वाला सुधीवर्ग ही उसमें रस—स्रोतका अनुसंधान कर अनुरक्त बना रह सकता है। विषयकी गूढता और

गंभीरता ही इसका कारण है। लक्षावधि जग-मगाते नक्षत्र-गणों तेजस्वी—तारक—पुञ्जोंकी मर्म—मंजुलता को जानना उनके रहस्य विज्ञानकी और 'चिन्तक' की प्रवृत्ति रख कर निरीक्षण करना उन नेत्रोंका विषय नहीं, जो निरंतर नीहारिकाओंमें उलझ कर नयनानंद ही लेते रहते हैं। और कल्पनालोकसे उनका सम्बन्ध जोड़ स्वप्न—संसारमें उलझ जाते हैं। किंतु उनकी गति-विधि-स्थिति—उत्पत्ति, और परिणाम कारणोंकी मीमांसाकर निष्कर्ष पर पहुंचनेका जो लोग प्रयत्न करते हैं वे वास्तवमें प्रणम्य हैं। पश्चिम प्रदेशमें साधन-सुविधा, और शासन सहयोगसे विज्ञानोन्नतिमें जन—मनोवृत्ति संभवित है। पर भारत देश पुराकालसे पर्णकी कुटी— एकांत तपः- साधना—पूत निःस्वार्थ ज्ञान-विज्ञान साधनामें जीवनानन्द मानता रहा है। तत्त्वचिन्तक जनोंने इस देश में साधन हीनावस्थामें भी वे चमत्कार किये हैं कि उनकी साधनाके समक्ष समस्त जगको नतमस्तक होना पड़ा है। आधुनिक शिक्षा एवं तज्जनित वातावरणने अवश्य ही परमुखापेक्षिता और साधन—हीनतामें आत्म-विश्वासके अभावकीभावना उत्पन्न की है, परन्तु आज भी उस युगके संस्कारोंमें समुत्पन्न कतिपय साधक विद्यमान अवश्य हैं— जो आत्मावलंबनानन्द पर निर्भर हो अपना यथा कथञ्चित् उदर निर्वाह मात्र कर बिना किसी फल कामनाके शास्त्र-सिन्धुका अवगाहन कर इस अज्ञानान्धकारके विस्तृत वायुमण्डलमें भी प्रकाश-पथका अनुसंधान करते हुए रत्नराशिके थाह पानेके लिए सतत यतमान बने हुए हैं। इस युगके ऐसेही एक महर्घ-रत्नका हम यहां परिचय करवाने जा रहे हैं। वराहमिहिर, भास्कराचार्य, आर्यभट्ट-आदि गणनशास्त्र-विचक्षणोंने जिस प्रकार ज्योतिर्विज्ञानकी सफल साधना की है, और ग्रन्थ-सम्पत्तिसे इस विज्ञानको प्रतिभा-प्रसाद समर्पित किया है। उसी प्रकार देश-कालानुरूप, एकांत निर्जन पर्वत-प्रदेश पर अवस्थित, सौध-शिखरकी मनोहारिणी रविरश्मिस्नात-सुषमाको निहारता हुआ, देवप्रयागकी देवोपम-भूमिके निकट-वर्ति उत्तुंग-अभ्रंलिहाग्रा 'दशरथ पर्वत' की पर्ण-कुटीमें एक दुर्बल-देह किन्तु सबल आत्मा, स्वार्थसाधनकी परिधिसे विलग हो निरंतर शास्त्रावगाहनमें निरत रहता है। ज्योतिःशास्त्र, जिसका एक ग्रह भी जब स्मृतिका विषय बन जाये तो सम्पत्तिका संग्रह सुलभ हो जाता है। शनिदेवका आतंक कृपणकी कुञ्जीको भी कमरसे शिथिल करानेकी क्षमता रख सकता है। (क्योंकि वह 'लोह'का स्वामि है) पर जिसकी आराधनामें नवों-ग्रह, अपनी-गति विधिका सूक्ष्मतम विवरण लिए निरंतर उपस्थित रहते हों, और इशारे पर सारे खगोलका सहज संचार कर सकते हों, वह यदि सम्पत्ति साधनासे वंचित बना रहे, और उपेक्षित जैसा जीवन व्यतीत करे तो उसका यह निःस्वार्थ तप है, और तीव्र-साधनाकी सिद्धि ही है। ज्योतिर्विदांवरिष्ठ मुकुन्दजी उसी पर्वतीय उपत्यकामें अधिवसित एक छोटेसे असंस्कृत-ग्राम 'खण्डग्राम' के महान् संस्कृति-साधक पुरुष हैं, निकटवर्ति देवप्रयाग और ऋषिकेशमें अपना अध्ययनावसर पूर्णकर वे आजकल दशरथ-पर्वत पर ज्ञान सुरसरिकी विमलधारा प्रवाहित कर रहे हैं। विज्ञापन-जगसे अत्यंत दूर अपरिचित यह साधक जनता ही नहीं अपने विषयके विद्वद्वर्गसे भी अपरिचित बना रहता है। 'चिन्दी' पाकर बजाजखाना खोल देने वाले, बिना पूंजीके सम्पन्न (?) व्यापारीके सम्पर्क से सुदूर यह विद्वान् आज ज्योतिर्विज्ञानमें कितना श्रम और साहित्य-प्रदान कर चुका है उसे बहुत ही कम या यों कहिए कि लोग नहीं ही जानते हैं।

एक दिन सहसा एक ग्रामीण-वसनधारी स्मित-विमल—मण्डल वाले पर्वतीय-प्रथा—प्रथित पुरुषको अपने घरके सामने तांगेसे उतरते देखा, और साथ में शीतकालीन यात्रीके बिस्तरेकी भांति गहरी-वजनी-गठरी साथमें।

जो सज्जन इनके साथमें थे वे मेरे परिचित-प्रोफेसर थे, अन्दर आकर उन्होंने उक्त समागत सज्जनका परिचय दिया तो मैं क्षण भर उस बिपुल

साधनाके भारसे विनम्र, सादगी लिए हुए, सौजन्य मूर्तिको देखकर विस्मित सा रह गया। पंडित मुकुन्द जी ने विमलहास्य-धाराके साथ सरलतापूर्वक मेरे प्रति अपने आंतरिक सद्भावोंका प्रकटीकरण करते हुए साथमें लाई हुई गठरीको खोलना प्रारम्भ किया, देखता हूँ कि सैंकड़ों नहीं, हजारों-पृष्ठ मौक्तिकपंक्तिकी भांति लिखित है। महाभारतकी भांति कोई विशाल ग्रन्थ-राशिका पुलिन्दा है, पर जानते देरी न लगी कि यह महान्-श्रम इन्हीं पंडित जीकी रचनाका है। इस युगमें इस भांति कौन बिना लोभ-लाभकी आशा-विश्वास लिए यह गहन कार्य-भार वहन करनेका साहस करेगा? परन्तु वास्तवमें मेरे तो आश्चर्यका पारावार ही नहीं रहा कि ज्योतिष जैसे उपेक्षित और रुक्ष कहे माने जाने वाले विषय पर यह तपस्वी इतना महत्त्वपूर्ण समय और त्यागमय श्रम समर्पित कर चुका है।

ज्योतिष-शास्त्रके अनेक आचार्य, अनेक मत, विधान, और पद्धतियां हैं त्रिस्कंधमें विभाजित। और अनेक मतान्तरोंमें विभक्त इस शास्त्रका समीकरण सामान्य विषय नहीं। नवीन और पुरातनोंके बीचकी खन्दक इन्हीं कारणोंसे विभिन्न दिशाओंमें विभक्तीकरण किए हुये है। श्री० पंडित मुकुन्द जी की अपनी रचनाओं की यही विशेषता है कि सागर-मन्थन कर उन्होंने अनेकत्वमें एकता लानेका दुर्धर्ष और भीष्मश्रम किया है।

पंडितजी की पद्धतिसे और निर्विकृत-विचार-परम्परासे भी चहे तो किसीको मतभेद हो जाए, पर उनके रचना-पाटव, और अगाध-श्रमसे प्रत्येकको उनके प्रति हार्दिक-श्रद्धावनत होना ही पड़ेगा। अनेक सहस्र श्लोकोंकी रचनामें जो साहित्यिक सामर्थ्य, और महती-प्रासादिक प्रतिभाकी देन है, उसमें बृहत्संहिताकारके बाद उपलब्ध ज्योतिःशास्त्रमें पंडित मुकुन्दजीका ही द्वितीयस्थान हो सकता है। ज्योतिषके चतुर्मुखी ज्ञानके साथ साहित्य व्याकरणका समन्वय वास्तवमें सुवर्णमें सुगन्धकी भांति ही है, इस पर भी निर्विकार सरलता और निःस्वार्थ साधना, शीलता तो निःसंदेह हिमालयवासी पंडितजीके हिम-मुकुटवत् उत्तुंग ही है।

निरभिमान-मूर्ति मुकुन्द-दैवज्ञजीने आज तक अनेक ग्रंथोंका प्रणयन किया है, जिनमें कुछेक ही प्रकाशनमें आ सके हैं।

१—दशामंजरी (निर्णय सागर प्रेससे प्रकाशित) २—पंचांग मंजूषा (निर्णयसा०) ३—आर्यासप्तति की आशुबोध टीका (जयपुरकी आचार्यमें स्वीकृत) ४—मुकुन्द-पद्धति (टिहरी नरेश को समर्पित निर्णय सागर प्रेससे प्रकाशित) ५—ज्योतिश्शास्त्र-प्रवेशिका बृहद् होड़ाचक्र (प्रकाशित) तथा ६—ज्योतिषरत्नाकरका एक भाग जो चार सौ पृष्ठोंमें लाहौरसे प्रकाशित हुआ है।

किन्तु यह तो उस रत्नराशिका नगण्य जैसा अंश है। अभी जो प्रकाशनकी प्रतिक्षामें विस्तरोंकी शोभा बढा रहा है, वह साहित्य विशाल और पण्डित जीकी वास्तविक प्रतिभाका प्रदर्शक है। ६०० श्लोकों की "बालबोध दीपिका" (जो ३०० पृष्ठोंमें लिखित रूपमें है) इसी भांति 'आयुर्दाय' के लिए सभी मतों का दोहनकर एक प्रामाणिक वस्तु एक स्थल पर संचित कर देने वाला 'आयुर्निर्णय ग्रन्थ' ६००श्लोकों में निर्मित हो गया है, सुरक्षित है। पत्रिकाओंमें अष्टवर्गोंकी योजना तो प्रायः होती है, किन्तु उनका उचित महत्त्व न जाननेके कारण रेखाचित्रोंके सौन्दर्य समन्वित कुण्डलियोंको विनोदसे देखा जाता है। परन्तु पण्डितजीने उस पर भी ४३४ पृष्ठोंके एक वृहत् निम्बन्धकी रचना कर रक्खी है। दिनचर्या आदि विषयक सुन्दर चर्चाकी खोजकर बहुत नवीनता प्रदर्शक ग्रन्थ 'जातकभूषण' भी ३५० श्लोकोंमें अपने ढंगका स्वतन्त्र और मननीय हो गया है।

इसी प्रकार एक सहस्र श्लोकोंमें "वृहज्ज्योतिष-शास्त्र-प्रवेश" नामक ग्रन्थ इस शास्त्रकी नवीन पुरातन विभिन्न पद्धतियोंका एक समीकरण संग्रह है, जो

अपने ... तीन मासका दैनिक ...

...तजीने सुन्दर... ...निर्णय

प्रस्तुत किया है।

१—मकरन्दतति (पृष्ठ ७०)
२—पोषक संग्रह (श्लोक ३००)
३—बृहत् मुकुन्दपद्धति (श्लोक १२६)
४—व्यापाररत्न (श्लोक १०००)
५—पद्धतिकल्पवल्ली (श्लोक ६५)
६—ज्योतिषरत्नाकर (श्लोक १२००० पृष्ठ ४००० जो आठ भागोंमें विभक्त है इसका केवल एक भाग मुद्रित हुआ है)

इस 'रत्नाकर' पुस्तकके ४००० पृष्ठोंके साथ ही पण्डितजी जिस दूसरी मूल्यवान् कृतिको अपने साथ लिए उज्जैन आये थे, जो १७२३ पृष्ठों और ५५०० श्लोकोंमें निर्मित 'ज्योतिस्तत्व' नामक महान् ग्रन्थ था, जिसमें ज्योतिश्शास्त्रके आरम्भिक ज्ञानसे लेकर सभी प्रकारसे संक्षेपमें व्यापकरूपका प्रदर्शन किया जा सका है। इस ग्रन्थमें अधिकांश प्रचलित ग्रन्थोंके मतोंको अपनाकर स्वीय दृष्टिकोणसे प्रदर्शित किया है। ज्योतिषके फल-जिज्ञासुओंके लिए तथा ज्ञान-पिपासुओंके लिए इसका प्रकाशन वास्तवमें एक विशिष्ट बात हो जाएगी। फलादेशका विभाग तो पण्डितजीके व्यापक ज्ञानका प्रतीक ही बन गया है। विभिन्न दृष्टिकोणोंको लक्ष्यमें रखकर जिस प्रकार प्रकट किया है, ... जाती है। वराहमिहिर, जैमिनी, परा... आचार्योंके मतोंका समीकरण करना और तथ्यके रूपमें स्वमतके साथ निर्णयप्रदर्शक पद्धतिसे निरूपित करना पाण्डित्यका ही काम है। एक ही ग्रन्थमें जातक ताजिक, फल-निष्पत्ति और प्रश्न मुहूर्तादि विविध प्रकारोंका सामञ्जस्य ज्योतिर्विज्ञान रसिकोंके लिए निःसन्देह बहुमूल्य कार्य हैं। पण्डितजीने २५-३० हजार श्लोकोंमें ज्योतिषकी सर्वाङ्गीण शास्त्र सेवा की है और वह भी निष्पृहताके साथ ही। अतएव ज्योतिर्विज्ञानानुरागियोंके लिए तो वे एक साधक तपस्वी ही हैं। हिमांचलकी छायामें गिरिगह्वरमें आवासकर जो तपोनिष्ठजन योग-साधना द्वारा अपनी और जन-कल्याणकी साधना किया करते थे, उन्हींकी भांति हिमधौत शिखरपर देवप्रयागका यह विमल विद्वान् मुकुन्द दैवज्ञ अपनी साधनामें सिद्धि प्राप्त कर रहा है। भगवद्गीताके "मा फलेषु कदाचन" ही इस विरल विद्वान्की सम्पत्ति है—जो आगे चलकर अनेकों इस त्यागी तपस्वीके कर्म द्वारा सम्पन्न बना सकनेमें समर्थ होगी। हम सरल-विनम्र निरभिमान-शान्त-तेजस्वी सज्जन-शिरोमणि विद्वद्रत्न मुकुन्द दैवज्ञ महोदयको और उनकी साधनाको नमस्कार करते हैं।

———

साहित्य-समालोचना

[जिन पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियां प्राप्त होंगी उन्हींकी समालोचना 'श्रीस्वाध्याय' में प्रकाशित हो सकेगी। एक प्रतिका केवल संक्षिप्त परिचय मात्र (नाममूल्यादि) प्राप्ति-स्वीकार रूपमें प्रकाशित होगा। —सम्पादक]

"संस्कृत पाठशालाओंका वर्तमान स्वरूप और उसमें परिवर्तनकी आवश्यकता"—

लेखक तथा प्रकाशक — श्रीमान् पं० वासुदेव द्विवेदी, वेदशास्त्री, साहित्याचार्य। यह पुस्तिका यू० पी०, पंजाब, विहार प्रभृति प्रान्तोंकी संस्कृत पाठशालाओंका भ्रमण कर उनकी वर्तमान दयनीय स्थिति और उसमें सुधारकी आवश्यकता पर लिखी गई है। संस्कृत पाठशालाओंको आदर्श शिक्षाकेन्द्र बनानेकी यह योजना बहुत ही